CHETANA
International Journal of Education
(CIJE)
Peer Reviewed/Refereed Journal
(ISSN: 2455-8729 (E) / 2231-3613 (P))
Impact Factor
SJIF 2023 - 7.286

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

आलेख

Received 20.01.2023 | Reviewed 24.01.2023 | Accepted 31.01.2023

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के संदर्भ में जे. कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता

*डॉ बलवान सिंह

सार संक्षेप

जिद्दू कृष्णमूर्ति 20वीं शताब्दी के एक ऐसे क्रान्तिकारी दार्शनिक एवं शिक्षविद् थे, जिनके विचारों ने शिक्षा जगत् को एक नई दिशा दिखाई है। इनका जन्म 12 मई 1895 को तमिलनाडू के मदन पल्ली गावं में ब्राहम्ण परिवार में हुआ था। इनके पिता नरायनिया एक थियोसोफिट थे एवं ब्रिटिश प्रशासन में कर्मचारी थे। इन्होंने 1928 में कृष्णमूर्ति फाउण्डेशन की स्थापना की तथा लोगों को 'वर्ल्ड टीचर' बनाने के प्रेरित किया। न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र में बोलने के लिए 04 जनवरी 1986 को आमंत्रित किया गया। यह उनका अन्तिम भाषण था। 170 मई 1986 को इनका देहावसा हो गया। जे. कृष्णमूर्ति ऐसी शिक्षा व्यवस्था के पक्षधर थे जो बालकों के समन्वित व्यक्तित्व का विकास करे, उसे वास्तविकता का बोध करावें तथा बालकों में प्रेम करूणा, प्रज्ञा संवेदनशीलता, अन्तः ज्ञान आदि गुणों का विकास करें।

प्रस्तावना

सामाजिक मूल्यों के बदलते प्रतिमानों के संदर्भ में आज नई शिक्षा नीति के प्रतिमानों पर पुनः चिन्तन करने का स्वर तीव्रता से उभर कर बुद्धिजीवियों एवं शिक्षाशास्त्रियों को नये सिरे से विचार करने के लिए प्रेरित कर रहा है। नवीन एवं प्राचीन मूल्यों के संघर्ष से उत्पन्न ऊर्जा ने बुद्धिजीवियों के मस्तिष्क में यद्यपि वैचारिक विचारधारा को गतिग प्रदान की है, परन्तु जटिल सामाजिक प्रक्रियाएँ उन्हें गंतव्य तक पहुँचाने में बाधाएँ सिद्ध हो रही है। शिक्षाविद् एवं समाजशास्त्रियों ने परिवर्तन के चक्रिय सिद्धान्त को स्वीकार किया है, जो कि सामाजिक, धार्मिक एवं दार्शनिक क्षेत्र में होने वाले चक्रिय परिर्वतनों की यथार्थता को चरितार्थ करता है। इन सिद्धान्तों के अनुसार आज के बुद्विजीवी अतीत के शैक्षिक प्रतिमानों को इसलिए भी उपादेय मानने लगे हैं, क्योंकी आज की बाल, किशोर एवं युवा पीढ़ी वर्तमान शिक्षा को उद्देशयविहीन समझकर अपने को समसामयिक सामाजिक समस्याओं का समाधान करने में असमर्थ पा रही है। दूसरी ओर शिक्षा के रूप में व्याप्त अनिश्चताओं ने भी योग्यता के लक्ष्य को भ्रष्ट उपायों से प्राप्त करने की प्रवृति को जन्म दे डाला है।

ऐसी परिस्थितियें में आज सर्वत्र प्राचीन शिक्षा के मूल्यों को वर्तमान शिक्षा में सम्मिलित करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। शिक्षा आयोगों की सिफारिशें भी इस वास्तविकता को प्रमाणित करती रही है। नैतिक शिक्षा, गुरूकुलीय अनुशासन, शास्त्रोक्त ज्ञान का बुद्वि से अनुपालन को आज सभी बुद्धिजीवियों द्वारा स्वीकार किया जा रहा है। साथ ही हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके पश्चात के काल में भी हमें ऐसे विचारक मिलते है जिनके चिंतन में अतीन की गहरी मूल्य दृष्टि पायी जाती है। गांधी, दयानन्द सरस्वती , जे कृष्णमूर्ति, अरविन्द घोष, विवेकानन्द, राधाकृष्णन आदि के शैक्षिक विचारों के अध्ययन–अध्यापन इस दृष्टि से हमारे लिए और भी महत्वपूर्ण है। यहाँ पर इन सभी विचारकों का अध्ययन कर पाना हमारे लिए संभव नही है, फिर भी हम प्रस्तुत लघु–शोध प्रबन्ध में जे. कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचारों के अध्ययन के साथ–साथ वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली में उनके शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता को समझने का प्रयास करेंगे।

अध्यन की आवश्यकता एवं महत्व

आज का युग विज्ञान एवं तकनीकी का युगग है और यह ज्ञान हमारे भावी भविष्य का एक आवश्यक पहलू भी है परन्तु इसका एक नकारात्मक प्रभाव को शिक्षा को समग्र जीवन की तैयारी में बाधक बना देता है वह है मानवीय पक्ष की अवहेलना। आज का विद्यार्थी, परिवार और समाज में जिस मानवीय शिक्षा को प्राप्त कर रहा है वह जाति, धर्म, संस्कृति और क्षेत्र के बन्धन में बंधी है और यह हमारे भावी कर्णधारों में संकीर्ण दृष्टिकोण को पोषित कर रही है। विद्यालयी शिक्षा विज्ञान व तकनीक पर बल देते हुए विद्यार्थी को यांन्त्रिक बना रही है तथा मानसिक मानकीकरण को बढ़ावा दे रही है। स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय भी ज्ञान का पोषण व कार्यकुशलता का संवर्द्धन कर रहे हैं और व्यक्तिव की समग्रता के स्थान पर केवल उसके ज्ञान पक्ष की समृद्धि के पोषक बने हुए है। ऐसे शैक्षिक परिवेश में विद्यार्थी के समग्र विकास की कल्पना करना निरर्थक ही प्रतीत होता है। आज की विद्यालयी शिक्षा बालक के प्रज्ञारहित मानसिक विकास को प्रश्रय देती है तथा ऐसे परिवेश में विज्ञान तथा तकनीकी के साथ–साथ संस्कारबद्धता की शिक्षा को सहज की मिल जाती है परन्तु विद्यार्थी के आत्मज्ञान को विकसित करने व उसे स्वयं को जानने का अवसर प्रदान नहीं करती। ऐसे में शिक्षा में समन्वित व्यक्तिव के निर्माण की अपेक्षा करना बेमानी होगा। व्यावहारिक रूप में देखने पर बोध होता है कि आज की शिक्षा बालक की आन्तरिक प्रकृति की उपेक्षा करते हुए केवल बाहरी कार्यकुशलता पर बल देती है तथा समग्र के स्थान पर अंश का ही विकास उसका ध्येय है। शिक्षा के इस आंशिक पक्ष को सरलीकृत शब्दों में स्पष्ट करें तो यह केवल तथ्यों के संकलन, जानकारियों, पुस्तकों तक सीमित है तथा इसका उद्धेश्य विद्यार्थियों को जीविकोपार्जन हेतु तैयार करना है जो कि आधुनिक समाज की पहली प्राथमिकता है। तथ्यों के संग्रह ने तथा कार्यकुशलता के संवर्द्धन ने (जिसे हम शिक्षा कहते है) हमें समन्वित जीवन और कर्म की समग्रता से वंचित कर दिया है चूंकि हम जीवन की पूर्ण प्रक्रिया को नहीं समझते इसलिए हम अंश को पूर्ण मानकर भ्रमित होते रहते है। जबकि वस्तुस्थिति यह है कि समग्रता को उसके अंशमात्र के द्वारा समझा जा सकता वरन् उसके केवल क्रिया, अनुभव व अवलोकन के द्वारा ही समझा जा सकता है। अतः वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था अपने उद्धेश्यों को प्राप्त करने में अधिक सफल नहीं हुई है। इसलिए वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के वैल्पिक प्रतिमान के विकास के रूप में जे. कृष्णमूर्ति के शिक्षा विषयक को व्यापक रूप प्रदान करना शोधकर्ता का प्रमुख उद्धेश्य रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. जे. कृष्णमूर्ति के शिक्षा दर्शन को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करना।
2. जे. कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता को जानना।
3. जे. कृष्णमूर्ति के शिक्षा दर्शन का राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 से तुलना करना।
4. जे. कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचारों को समकालिन भारतीय शिक्षा की समस्याओं तथा उभरती हुई चुनौतियों के समाधान के रूप में प्रस्तुत करना।

जे. कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचारों की राष्ट्रीय पाठ्चर्या की रूपरेखा 2005 से तुलना

जे. कृष्णमूर्ति का शिक्षा दर्शन आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली में विशेष महत्व रखता है। शिक्षा से सम्बन्धित उनके अनेक विचार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के समीप दिखायी देते है। राष्ट्रीय पाठ्चर्या की रूपरेखा 2005 में शिक्षा बिना बोझ के, संरचनावाद, रटन्त शिक्षा पद्धति का प्रयोग अनुचित, व्यवसायिक शिक्षा पर बल, विद्यालय एवं कक्षा का वातावरण, अनुशासन, शिक्षक उत्तरदायित्व, सजृनात्मकता आदि विषय जे. कृष्णमूर्ति के शिक्षा दर्शन से किसी न किसी रूप में समानता रखते है। इन्ही व्यवस्थागत मुद्दो पर विचार करने तथा विद्यालयी शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में पाँच मूलभूत मार्गदर्शक सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये है, जो निम्न है –

- ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोडना।
- पढाई रटन्त प्रणाली से मुक्त हो, यह सुनिश्चित करना।
- पाठ्यचर्या का इस तरह संवर्धन की वह बच्चों को चहुँमुखी विकास के अवसर मुहैया करवाएं बजाय इसके कि वह पाठ्यपुस्तक केंद्रित बनकर रह जाये।

⇨ परीक्षा को अपेक्षाकृत अधिक लचीला बनाना और कक्षा की गतिविधियों से जोड़ना।

⇨ एक ऐसी अधिभावी पहचान का विकास करना जिसमें प्रजातांत्रिक राज्य व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रीय चिन्ताए समाहित हो।

- इस प्रकार उपरोक्त वर्णित सभी मार्गदर्शक सिद्धांत किसी न किसी रूप में जे. कृष्णमूर्ति के शिक्षा दर्शन से समानता अवश्य रखते है। इन सिद्धांतों में कहा गया है कि ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोड़ना चाहिए, अर्थात रचनात्मक परिप्रेक्ष्य में सीखना ज्ञान के निर्माण की एक प्रक्रिया है। विद्यार्थी सक्रिय रूप से पूर्व प्रचलित विचारों में उपलब्ध सामग्री या गतिविधियों के आधार पर अपने ज्ञान या अनुभव की रचना करते है विचारो की रचना एवं पुनर्रचना उनके विकास के आवश्यक लक्षण है। अर्थात बालक स्वअनुभव द्वारा निर्मित विचारो से अधिक सीखता है। इसलिए बालक के ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोड़कर उनमें संरचनात्मक योग्यता का विकास करना चाहिए। इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति कहते है कि ज्ञान का निर्माण बालक के पूर्व ज्ञान तथा नवीन अनुभव से मिलकर जो अर्थ निकलता है से होता है। उनके अनुसार सही शिक्षा वही है जो बालक में स्वयं के बाहर और अन्दर घटित होने वाली घटनाओं से सूक्ष्म निरीक्षण की योग्यता विकसित कर सके अर्थात बालक के ज्ञान को बाहरी जीवन से जोडकर शिक्षा देनी चाहिए।
- राष्ट्रीय पाठ्चर्या की रूपरेखा 2005 में कहा गया है कि शिक्षा रटन्त प्रणाली से मुक्त होनी चाहिए क्योंकि सभी बच्चे स्वभाव से ही सीखने के लिए प्रेरित रहते है। और उनमें सीखने की क्षमता होती है। अतः बच्चों को रटने की बजाय उनमें अर्थ निकालने, अमूर्त सोच की क्षमता विकसित करने, स्वअनुभव एवं स्वयं करने सीखने पर बल देना चाहिए। इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति कहते है कि शिक्षा केवल पुस्तकों से सीखना, किन्हीं तथ्यों को कंठस्थ करना तथा समाज के प्रवाह में बहना नही है। और यह केवल मन को प्रशिक्षित करना भी नही है। क्योंकि प्रशिक्षण कार्य कुशलता को उत्पन्न करता है, किन्तु नवीनता का अविष्कार नही करता। अतः शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थी के समन्वित व्यक्त्वि का विकास करे, उसे वास्तविकता को बोध कराये तथा उसमें प्रेम, करूणा, प्रज्ञा, संवेदनशीलता, अंतःज्ञान आदि गुणों का विकास करे। उनके अनुसार शिक्ष का लक्ष्य केवल विद्वान तकनीशियन या वैज्ञानिक तैयार करना ही नही है, बल्कि ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना है जो भयमुक्त तथा जीवन की अखण्ड प्रक्रिया का अनुभव करने में विद्यार्थी की सहायता करे।
- पाठ्यक्रम के संबंध में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में कहा गया है कि पाठ्यक्रम पाठ्यपुस्तक केंद्रित ने होकर बच्चों का चहुँमुखी विकास करने वाला होना चाहिए। पाठ्यक्रम बच्चों की आयु, रूचि, योग्यता एवं क्षमताओं के अनुसार होना चाहिए जिससे छात्र सक्रिय रूप से भाग ले सके। इस संबंध में जे. कृष्णमूर्ति ने कहा है कि पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि जो बालको को जीवकोपार्जन के योग्य बना सके। इसके लिए पाठ्यक्रम में बुद्धि और संवेदनशीलता का विकास करने वाली गतिविधियां शामिल होनी चाहिए। जे. कृष्णमूर्ति जी ने शैक्षिक पाठ्यक्रम में व्यावसायिक विषय जोड़ने पर बल देते है जिसकी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में विशेष आवश्यकता हैं क्योंकि व्यावसायिक शिक्षा द्वारा बालक की अन्तर्निहित शक्तियों, कुशलताओं, स्वावलम्बन तथा आत्मप्रदश्नन को विकसित किया जा सकता है। अतः पाठ्यक्रम पाठ्यपुस्तक केंद्रित न होकर बालकों का सर्वांगीण एवं समन्वित विकास करने वाला होना चाहिए।
- एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया कि वर्तमान विद्यालयी शिक्षा सूचनाओं को ज्ञान एवं बच्चे को ज्ञान ग्रहणकर्ता मात्र समझती है। पाठ्यपुस्तकों का आकार प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है और शिक्षक मात्र उसी पाठ्यपुस्तक केंद्रित जानकारी को छोटे बच्चों के मस्तिष्क के भर देना चाहते है अतः शिक्षक एवं समाज की इस मानसिकता में बदलाव आना चाहिए जो बच्चों पर उग्र रूप से प्रतिस्पर्द्धी बनने व असामान्य योग्यता दर्शाने के लिए दबाव डालती है, अर्थात शिक्ष बिना बोझ की होनी चाहिए। बच्चों में अपने अनुभवों से प्राप्त जानकारी को रचने की सामर्थ्य विकसित करनी चाहिए, जिससे बालक आंनदपूर्ण अनुभव के साथ सीख सके। इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति ने कहा है कि शिक्ष बिना बोझ की होनी चाहिए, अर्थात बालकों में स्वअनुभव बालकों में स्वअनुभव तथा स्वकार्य करने सीखने पर बल देना चाहिए, जिससे वे रटन्त शिक्षा प्रणाली से तो मुक्त होगें ही साथ ही उनको पाठ्यपुस्तकों का भी बोझ सहन नही करना पडेगा।
- अनुशासन के संबंध में एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया कि बच्चों की रूचियों एवं संभावनाओं के विकास के लिए उनमें आत्मानुशासन का मूल्य और आदत डालना महत्वपूर्ण होता है अर्थात् अनुशासन ऐसा होना चाहिए जो काम के सम्पनन होने में मदद करे और बच्चों की सक्षमता को बढाए। अनुशासन शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए आजादी, विकल्प एवं

स्वायत्तता बढाने वाला होना चाहिए इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति ने कहा है कि अनुशासन नियंत्रण या दमन सही है, वरन् यह तो विद्यार्थी को ऐसा स्वतंत्र परिवेश प्रदान करता है जिसमें वह स्वतंत्रता पूर्वक विचारों का अभिव्यक्त कर सके।

- एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया कि चेतन एवं अचेतन रूप से बच्चे संरचित या असंरचित समय में अपने विद्यालय एवं कक्षा के वातावरण से निरंतर अन्तःक्रिया करते रहते है। अतः इसके लिए आवश्यक है कि विद्यालय का वातावरण जीवन्त, दोस्ताना, शांत एवं भौतिक संसाधनों से परिपूर्ण होना चाहिए, ताकि छात्रों का अधिगम प्रभावशाली एवं स्थायी हो सके। इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति ने कहा है कि विद्यालय एक ऐसा स्थान है जहाँ विद्यार्थी किसी भी प्रकार के भय से मुक्त होकर मूल रूप से आनन्दित रहते हुए प्रसन्नता के साथ सीखने की कला में दक्ष होता है अतः विद्यालय ऐसे होने चाहिए जो केवल तथ्यों के सकंलन, कार्यक्षमता के विकास व यन्त्रवत विकास की शिक्ष न देकर, विद्यार्थी को आत्मबोध कराते हुए उसके समग्र विकास की आधारशिला रख सके।
- शिक्षक के उत्तरदायित्व के संबंध में एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया कि शिक्षक को विद्यार्थीयों की सहभागिता और रचानत्मकता को बढावा देना चाहिए, तथा साथ ही सीखने की प्रक्रिया में बच्चों की रूचि, जिज्ञासा आदि प्रश्नों के लिए पर्याप्त स्थान होना चाहिए, ताकि बच्चों में नवीन विचारों की उत्पत्ति हो सकें। इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति ने कहा है कि समन्वित व्यक्तिव के निर्माण में शिक्षक की महती भूमिका होती है। सभी प्रकार के पूर्वाग्रह और सत्ताभाव से मुक्त होकर शिक्षक को सर्वप्रथम प्रत्येक बालक का पूर्ण ध्यान से निरीक्षण करना चाहिए तथा उसके जीवन बोध में सहायता करनी चाहिए। शिक्षक एक महानतम पेशा है अतः शिक्षक का मूल दायित्व है कि वह विद्यार्थी के मन, ह्रदय एवं शरीर के समग्र उद्घाटन के अवसर उपलब्ध कराते हुए उसे प्रज्ञा एवं सत्य के लिए उचित मार्गदर्शन करे।
- शान्ति के लिए शिक्षा के संबंध में एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया कि हम अभूतपूर्व हिंसा के दौर में जी रहे है इस दौर में असहिष्णुता, विवाद, कट्टरवाद की निरंतर आशंकाएं है, अतः शान्ति स्थापित करने की दीर्घकालीन प्रक्रिया में शिक्षा एक महत्वपूर्ण आयाम है। अतः पाठ्यक्रम में ऐसी गतिविधियों को शामिल किया जाना चाहिए जो बच्चों को शान्ति की शिक्षा के प्रति सचेत करे। अर्थात शिक्षा ऐसी हो जो नैतिक एवं शान्तिपूर्ण जीवन के उद्देश्यों के अर्थो को विकसित कर सके। इसी संबंध में जे. कृष्णमूर्ति ने कहा है कि विश्व शान्ति तथा विश्व समाज के कल्याण हेतु शिक्षा ऐसी हो जो सजृनशील व संवेदनशील व्यक्तियों का निर्माण करे तथा समस्त पूर्वाग्रहों व संस्कारबद्धता से मुक्त होकर नवीन मूल्यों के निर्माण में विद्यार्थी को सक्षम बनाये तथा उसमें वैश्विक समझ विकसित कर सके। इस प्रकार ऐसी शिक्षा ही एक नयी संस्कृति एवं शान्तिमय विश्व की स्थापना कर सकेगी।

निष्कर्ष

कृष्णमूर्ति ने समाज में एक समन्वयकारी दृष्टिकोण उत्पन्न किया। वे एक भय मुक्त समाज का निमार्ण करना चाहते थे। मानवीय गुणों को विकसित कर समग्रग एकात्म व्यक्ति का विकास किया। बालक के अंतर्निहित शक्तियों को विकसित करने का प्रयास किया। उनका योगदान जीवन मूल्यों की खोज में सहायक है। उन्होंने आत्मबोध पैदा करने की शिक्षा दी। बालक के सृजनशीलता एवं प्रज्ञा विकसित करने का प्रयास किया। व्यक्ति का व्यक्ति तथा व्यक्ति एवं समाज के मध्य उचित सम्बन्ध का संवर्धन किया। ह्रदय में प्रेम उत्पन्न करने की प्रेरणा दी। उनकी शिक्षा समाज में फैले हुए विकृतियों को दूर करने में सहायक सिद्ध हुआ। बालकों में स्वतंत्र चिंतन को जागृत करने के प्रयास में सहायक बना। पाठ्यक्रम में जीविका चलने वाले विषयों के अतिरिक्त जीव से सम्बन्धित विषयों को समाज में जोड़ने का प्रयास किया।

इस प्रकार हम कह सकते है कि किसी विचारक की तरह ही किसी दस्तावेज की भी एक सीमा होती है, और यह बात एन.सी.एफ. 2005 पर भी लागू होती है। इससे पहले भी एन.सी.एफ. 2000 रहा है और इसके बाद भी कोई दस्तावेज अवश्य आयेगा। समय की सीमा सभी के साथ होती है और समय के साथ बदलाव की भी आवश्यकता होती है लेकिन इतना अवश्य है कि एन.सी.एफ. 2005 के मागदर्शक सिद्धांत आज की हमारे विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार दोनों का संक्षिप्त तुलनात्मक विवेचन हमें यह दिशा देता है कि बालक हमेशा से सीखने सीखाने की प्रक्रिया के केंद्र में रहा है। उसके भाव, सेंवग, अनुभव, सृजन और जीवन को सीखने सीखाने की कोई भी प्रक्रिया उपेक्षित नही कर सकती। संभवतः सही बालककेंद्रित शिक्षा का मूल दर्शन है, और इसी दर्शन को समझने–समझाने में तथा व्यवहार में लाने के लिए शिक्षा में नये–नये प्रयोग होते रहते है। इन प्रयोगों की श्रंखला में जे. कृष्णमूर्ति भी है और एन.सी.एफ. 2005 भी है।

संदर्भ ग्रन्थ

अग्रवाल, सरस्वती : 'जे. कृष्णमूर्ति का शिक्षा दर्शन', परिप्रेक्ष्य वर्ष 2015, अंक 2

कृष्णमूर्ति जे. : 'सत्य एक पथहीन भूमि' वाराणसी, कृष्णमूर्ति परिषद, 1996

कृष्णमूर्ति जे. : 'स्कूलों के नाम पत्र' जे. कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इण्डिया 1998

कृष्णमूर्ति जे. : 'सिखने की कला' कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया वाराणसी

कृष्णमूर्ति जे. : 'शिक्षा क्या है?' कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया वाराणसी

साहा, सुजाता (2010) : 'कृष्णमूर्ति की शिक्षा दृष्टि और उसकी प्रासंगिकता', 'भारतीय आधुनिक शिक्षा', NCERT नई दिल्ली।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) : NCERT, नई दिल्ली।

Corresponding Author
*** Dr. Balwan Singh**
Pricipal, Shri Krishan T. T. College,
Kotputli, District Jaipur (Rajasthan)
Email ID : bsyadav082@gmail.com, Mobile No. 9929086377